॥ श्रीहरिः ॥

१. श्रीसोमनाथ

यह ज्योतिर्लिङ्ग सोमनाथ नामक विश्वप्रसिद्ध मन्दिरमें स्थापित है। यह मन्दिर गुजरात प्रान्तके काठियावाड़ क्षेत्रमें समुद्रके किनारे स्थित है। पहले यह क्षेत्र प्रभासक्षेत्रके नामसे जाना जाता था। यहीं भगवान् श्रीकृष्णने जरा नामक व्याधके बाणको निमित्त बनाकर अपनी लीलाका संवरण किया था। यहाँके ज्योतिर्लिङ्गकी कथा पुराणोंमें इस प्रकार दी हुई है—

दक्ष प्रजापतिकी सत्ताईस कन्याएँ थीं। उन सभीका विवाह चन्द्र देवताके साथ हुआ था। किन्तु चन्द्रमाका समस्त अनुराग उनमें एक केवल रोहिणीके प्रति ही रहता था। उनके इस कार्यसे दक्ष प्रजापतिकी अन्य कन्याओंको बहुत कष्ट रहता था। उन्होंने अपनी यह व्यथा-कथा अपने पिताको सुनायी। दक्ष प्रजापतिने इसके लिये चन्द्रदेवको बहुत प्रकारसे समझाया। किन्तु रोहिणीके वशीभूत उनके हृदयपर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। अन्ततः दक्षने क्रुद्ध होकर उन्हें 'क्षयी' हो जानेका शाप दे दिया। इस शापके कारण चन्द्रदेव तत्काल क्षयग्रस्त हो गये। उनके क्षयग्रस्त होते ही पृथ्वीपर सुधा-शीतलता-वर्षणका उनका सारा कार्य रुक गया। चारों ओर त्राहि-त्राहि मच गयी। चन्द्रमा भी बहुत दुःखी और चिन्तित थे। उनकी प्रार्थना सुनकर इन्द्रादि देवता तथा वसिष्ठ आदि ऋषिगण उनके उद्धारके लिये पितामह ब्रह्माजीके पास गये। सारी बातोंको सुनकर ब्रह्माजीने कहा—'चन्द्रमा अपने शाप-विमोचनके लिये अन्य देवोंके साथ पवित्र प्रभासक्षेत्रमें जाकर मृत्युञ्जयभगवान्‌की आराधना करें। उनकी कृपासे अवश्य ही इनका शाप नष्ट हो जायगा और ये रोगमुक्त हो जायेंगे।'

उनके कथनानुसार चन्द्रदेवने मृत्युञ्जयभगवान्‌की आराधनाका सारा कार्य पूरा किया। उन्होंने घोर तपस्या करते हुए दस करोड़ मृत्युञ्जय-मन्त्रका जप किया। इससे प्रसन्न होकर मृत्युञ्जय—भगवान् शिवने उन्हें अमरत्वका वर प्रदान किया। उन्होंने कहा—'चन्द्रदेव! तुम शोक न करो। मेरे वरसे तुम्हारा शाप-मोचन तो होगा ही, साथ-ही-साथ प्रजापति दक्षके वचनोंकी रक्षा भी हो जायगी। कृष्ण पक्षमें प्रतिदिन तुम्हारी एक-एक कला क्षीण होगी, किन्तु पुनः शुक्ल पक्षमें उसी क्रमसे तुम्हारी एक-एक कला बढ़ जाया करेगी। इस प्रकार प्रत्येक पूर्णिमाको तुम्हें पूर्ण चन्द्रत्व प्राप्त होता रहेगा।' चन्द्रमाको मिलनेवाले पितामह ब्रह्माजीके इस वरदानसे सारे लोकोंके प्राणी प्रसन्न हो उठे। सुधाकर चन्द्रदेव पुनः दसों दिशाओंमें सुधा-वर्षणका कार्य पूर्ववत् करने लगे।

शापमुक्त होकर चन्द्रदेवने अन्य देवताओंके साथ मिलकर मृत्युञ्जय-भगवान्‌से प्रार्थना की कि आप माता पार्वतीजीके साथ सदाके लिये प्राणियोंके उद्धारार्थ यहाँ निवास करें। भगवान् शिव उनकी इस प्रार्थनाको स्वीकार करके ज्योतिर्लिङ्गके रूपमें माता पार्वतीजीके साथ तभीसे यहाँ रहने लगे।

पावन प्रभासक्षेत्रमें स्थित इस सोमनाथ-ज्योतिर्लिङ्गकी महिमा महाभारत, श्रीमद्भागवत तथा स्कन्दपुराणादिमें विस्तारसे बतायी गयी है। चन्द्रमाका एक नाम सोम भी है, उन्होंने भगवान् शिवको ही अपना नाथ—स्वामी मानकर यहाँ तपस्या की थी। अतः इस ज्योतिर्लिङ्गको सोमनाथ कहा जाता है। इसके दर्शन, पूजन, आराधनसे भक्तोंके जन्म-जन्मान्तरके सारे पातक और दुष्कृत्य विनष्ट हो जाते हैं। वे भगवान् शिव और माता पार्वतीकी अक्षयकृपाका पात्र बन जाते हैं। मोक्षका मार्ग उनके लिये सहज ही सुलभ हो जाता है। उनके लौकिक-पारलौकिक सारे कृत्य स्वयमेव, अनायास सफल हो जाते हैं।

२. श्रीमल्लिकार्जुन

यह ज्योतिर्लिङ्ग आन्ध्रप्रदेशमें कृष्णा नदीके तटपर श्रीशैलपर्वतपर स्थित है। इस पर्वतको दक्षिणका कैलास कहा जाता है। महाभारत, शिवपुराण तथा पद्मपुराण आदि धर्मग्रन्थोंमें इसकी महिमा और महत्ताका विस्तारसे वर्णन किया गया है।

पुराणोंमें इस ज्योतिर्लिङ्गकी कथा इस प्रकार बतायी गयी है—एक बारकी बात है, भगवान् शङ्करजीके दोनों पुत्र श्रीगणेश और श्रीस्वामी कार्त्तिकेय विवाहके लिये परस्पर झगड़ने लगे। प्रत्येकका आग्रह था कि पहले मेरा विवाह किया जाय। उन्हें लड़ते-झगड़ते देखकर भगवान् शङ्कर और माँ भवानीने कहा—'तुम लोगोंमेंसे जो पहले पूरी पृथ्वीका चक्कर लगाकर यहाँ वापस लौट आयेगा उसीका विवाह पहले किया जायगा।' माता-पिताकी यह बात सुनकर श्रीस्वामी कार्त्तिकेय तो तुरन्त पृथ्वी-प्रदक्षिणाके लिये दौड़ पड़े। लेकिन गणेशजीके लिये तो यह कार्य बड़ा ही कठिन था। एक तो उनकी काया स्थूल थी, दूसरे उनका वाहन भी मूषक—चूहा था। भला, वे दौड़में स्वामी कार्त्तिकेयकी समता किस प्रकार कर पाते? लेकिन उनकी काया जितनी स्थूल थी बुद्धि उसीके अनुपातमें सूक्ष्म और तीक्ष्ण थी। उन्होंने अविलम्ब पृथ्वीकी परिक्रमाका एक सुगम उपाय खोज निकाला। सामने बैठे माता-पिताका पूजन करनेके पश्चात् उनकी सात प्रदक्षिणाएँ करके उन्होंने पृथ्वी-प्रदक्षिणाका कार्य पूरा कर लिया। उनका यह कार्य शास्त्रानुमोदित था—

पित्रोश्च पूजनं कृत्वा प्रक्रान्तिं च करोति यः।
तस्य वै पृथिवीजन्यं फलं भवति निश्चितम्॥

(रु० सं० खं० ४, अ० १९)

पूरी पृथ्वीका चक्कर लगाकर स्वामी कार्त्तिकेय जबतक लौटे तबतक गणेशजीका 'सिद्धि' और 'बुद्धि' नामवाली दो कन्याओंके साथ विवाह हो चुका था और उन्हें 'क्षेम' तथा 'लाभ' नामक दो पुत्र भी प्राप्त हो चुके थे। यह सब देखकर स्वामी कार्त्तिकेय अत्यन्त रुष्ट होकर क्रौञ्च पर्वतपर चले गये। माता पार्वती वहाँ उन्हें मनाने पहुँचीं। पीछे शङ्करभगवान् वहाँ पहुँचकर ज्योतिर्लिङ्गके रूपमें प्रकट हुए और तबसे मल्लिकार्जुन-ज्योतिर्लिङ्गके नामसे प्रख्यात हुए। इनकी अर्चना सर्वप्रथम मल्लिका-पुष्पोंसे की गयी थी। मल्लिकार्जुन नाम पड़नेका यही कारण है।

एक दूसरी कथा यह भी कही जाती है—इस शैलपर्वतके निकट किसी समय राजा चन्द्रगुप्तकी राजधानी थी। किसी विपत्तिविशेषके निवारणार्थ उनकी एक कन्या महलसे निकलकर इस पर्वतराजके आश्रयमें आकर यहाँके गोपोंके साथ रहने लगी। उस कन्याके पास एक बड़ी ही शुभलक्षणा सुन्दर श्यामा गौ थी। उस गौका दूध रातमें कोई चोरीसे दुह ले जाता था। एक दिन संयोगवश उस राजकन्याने चोरको दूध दुहते देख लिया और क्रुद्ध होकर उस चोरकी ओर दौड़ी, किन्तु गौके पास पहुँचकर उसने देखा कि वहाँ शिवलिङ्गके अतिरिक्त और कुछ नहीं है। राजकुमारीने कुछ काल-पश्चात् उस शिवलिङ्गपर एक विशाल मन्दिरका निर्माण कराया। यही शिवलिङ्ग मल्लिकार्जुनके नामसे प्रसिद्ध है। शिवरात्रिके पर्वपर यहाँ बहुत बड़ा मेला लगता है।

इस मल्लिकार्जुन-शिवलिङ्ग और तीर्थक्षेत्रकी पुराणोंमें अत्यधिक महिमा बतायी गयी है। यहाँ आकर शिवलिङ्गका दर्शन-पूजन-अर्चन करनेवाले भक्तोंकी सभी सात्त्विक मनोकामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं। उनकी भगवान् शिवके चरणोंमें स्थिर प्रीति हो जाती है। दैहिक, दैविक, भौतिक सभी प्रकारकी बाधाओंसे वे मुक्त हो जाते हैं। भगवान् शिवकी भक्ति मनुष्यको मोक्षके मार्गपर ले जानेवाली है।
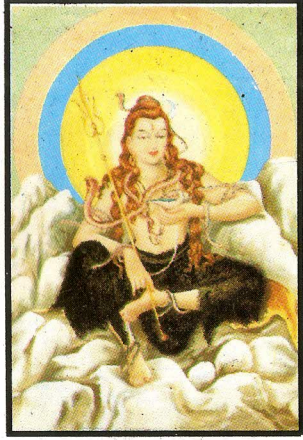
३. श्रीमहाकालेश्वर

यह परम पवित्र ज्योतिर्लिङ्ग मध्यप्रदेशके उज्जैन नगरमें है। पुण्यसलिला क्षिप्रा—शिप्रा-नदीके तटपर अवस्थित यह उज्जैन प्राचीनकालमें उज्जयिनीके नामसे विख्यात था। इसे अवन्तिकापुरी भी कहते थे। यह भारतकी परम पवित्र सप्तपुरियोंमेंसे एक है।

इस ज्योतिर्लिङ्गकी कथा पुराणोंमें इस प्रकार बतायी गयी है—प्राचीनकालमें उज्जयिनीमें राजा चन्द्रसेन राज्य करते थे। वह परम शिव-भक्त थे। एक दिन श्रीकर नामक एक पाँच वर्षका गोप-बालक अपनी माँके साथ उधरसे गुजर रहा था। राजाका शिवपूजन देखकर उसे बहुत विस्मय और कौतूहल हुआ। वह स्वयं उसी प्रकारकी सामग्रियोंसे शिवपूजन करनेके लिये लालायित हो उठा। सामग्रीका साधन न जुट पानेपर लौटते समय उसने रास्तेसे एक पत्थरका टुकड़ा उठा लिया। घर आकर उसी पत्थरको शिवरूपमें स्थापित कर पुष्प, चन्दन आदिसे परम श्रद्धापूर्वक उसकी पूजा करने लगा। माता भोजन करनेके लिये बुलाने आयी, किन्तु वह पूजा छोड़कर उठनेके लिये किसी प्रकार भी तैयार नहीं हुआ। अन्तमें माताने झल्लाकर पत्थरका वह टुकड़ा उठाकर दूर फेंक दिया। इससे बहुत ही दुःखी होकर वह बालक जोर-जोरसे भगवान् शिवको पुकारता हुआ रोने लगा। रोते-रोते अन्तमें बेहोश होकर वह वहीं गिर पड़ा। बालककी अपने प्रति यह भक्ति और प्रेम देखकर आशुतोष भगवान् शिव अत्यन्त प्रसन्न हो गये। बालकने ज्यों ही होशमें आकर अपने नेत्र खोले तो उसने देखा कि उसके सामने एक बहुत ही भव्य और अति विशाल स्वर्ण और रत्नोंसे बना हुआ मन्दिर खड़ा है। उस मन्दिरके भीतर एक बहुत ही प्रकाशपूर्ण, भास्वर, तेजस्वी ज्योतिर्लिङ्ग खड़ा है। बच्चा प्रसन्नता और आनन्दसे विभोर होकर भगवान् शिवकी स्तुति करने लगा। माताको जब यह समाचार मिला तब दौड़कर उसने अपने प्यारे लालको गलेसे लगा लिया। पीछे राजा चन्द्रसेनने भी वहाँ पहुँचकर उस बच्चेकी भक्ति और सिद्धिकी बड़ी सराहना की। धीरे-धीरे वहाँ बड़ी भीड़ जुट गयी। इतनेमें उस स्थानपर हनुमान्‌जी प्रकट हो गये। उन्होंने कहा—'मनुष्यो! भगवान् शङ्कर शीघ्र फल देनेवाले देवताओंमें सर्वप्रथम हैं। इस बालककी भक्तिसे प्रसन्न होकर उन्होंने इसे ऐसा फल प्रदान किया है, जो बड़े-बड़े ऋषि-मुनि करोड़ों जन्मोंकी तपस्यासे भी प्राप्त नहीं कर पाते। इस गोप-बालककी आठवीं पीढ़ीमें धर्मात्मा नन्दगोपका जन्म होगा। द्वापरयुगमें भगवान् विष्णु कृष्णावतार लेकर उनके वहाँ तरह-तरहकी लीलाएँ करेंगे।' हनुमान्‌जी इतना कहकर अन्तर्धान हो गये। उस स्थानपर नियमसे भगवान् शिवकी आराधना करते हुए अन्तमें श्रीकर गोप और राजा चन्द्रसेन शिवधामको चले गये।

इस ज्योतिर्लिङ्गके विषयमें एक दूसरी कथा इस प्रकार कही जाती है—किसी समय अवन्तिकापुरी (उज्जयिनी)में वेदपाठी तपोनिष्ठ एक अत्यन्त तेजस्वी ब्राह्मण रहते थे। एक दिन दूषण नामक एक अत्याचारी असुर उनकी तपस्यामें विघ्न डालनेके लिये वहाँ आया। ब्रह्माजीके वरसे वह बहुत शक्तिशाली हो गया था। उसके अत्याचारसे चारों ओर त्राहि-त्राहि मची हुई थी। ब्राह्मणको कष्टमें पड़ा देखकर प्राणिमात्रका कल्याण करनेवाले भगवान् शङ्कर वहाँ प्रकट हो गये। उन्होंने एक हुङ्कारमात्रसे उस दारुण अत्याचारी दानवको वहीं जलाकर भस्म कर दिया। भगवान् वहाँ हुङ्कारसहित प्रकट हुए इसलिये उनका नाम महाकाल पड़ गया। इसीलिये इस परम पवित्र ज्योतिर्लिङ्गको महाकालके नामसे जाना जाता है।

महाभारत, शिवपुराण एवं स्कन्दपुराणमें इस ज्योतिर्लिङ्गकी महिमाका पूरे विस्तारके साथ वर्णन किया गया है।
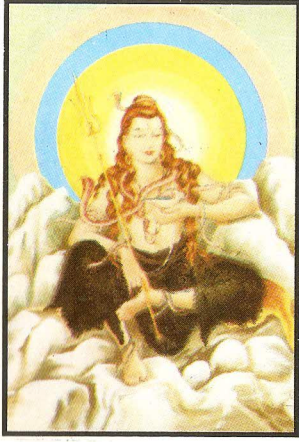
४. श्रीओङ्कारेश्वर, श्रीअमलेश्वर

यह ज्योतिर्लिङ्ग मध्यप्रदेशमें पवित्र नर्मदा नदीके तटपर अवस्थित है। इस स्थानपर नर्मदाके दो धाराओंमें विभक्त हो जानेसे बीचमें एक टापू-सा बन गया है। इस टापूको मान्धाता-पर्वत या शिवपुरी कहते हैं। नदीकी एक धारा इस पर्वतके उत्तर और दूसरी दक्षिण होकर बहती है। दक्षिणवाली धारा ही मुख्य धारा मानी जाती है। इसी मान्धाता-पर्वतपर श्रीओङ्कारेश्वर-ज्योतिर्लिङ्गका मन्दिर स्थित है। पूर्वकालमें महाराज मान्धाताने इसी पर्वतपर अपनी तपस्यासे भगवान् शिवको प्रसन्न किया था। इसीसे इस पर्वतको मान्धाता-पर्वत कहा जाने लगा। इस ज्योतिर्लिङ्ग-मन्दिरके भीतर दो कोठरियोंसे होकर जाना पड़ता है। भीतर अँधेरा रहनेके कारण यहाँ निरन्तर प्रकाश जलता रहता है। ओङ्कारेश्वरलिङ्ग मनुष्यनिर्मित नहीं है। स्वयं प्रकृतिने इसका निर्माण किया है। इसके चारों ओर हमेशा जल भरा रहता है। सम्पूर्ण मान्धाता-पर्वत ही भगवान् शिवका रूप माना जाता है। इसी कारण इसे शिवपुरी भी कहते हैं। लोग भक्तिपूर्वक इसकी परिक्रमा करते हैं।

कार्त्तिकी पूर्णिमाके दिन यहाँ बहुत भारी मेला लगता है। यहाँ लोग भगवान् शिवजीको चनेकी दाल चढ़ाते हैं। रात्रिकी शयन-आरतीका कार्यक्रम बड़ी भव्यताके साथ होता है। तीर्थयात्रियोंको इसके दर्शन अवश्य करने चाहिये।

इस ओङ्कारेश्वर-ज्योतिर्लिङ्गके दो स्वरूप हैं। एकको अमलेश्वरके नामसे जाना जाता है। यह नर्मदाके दक्षिण तटपर ओङ्कारेश्वरसे थोड़ी दूर हटकर है। पृथक् होते हुए भी दोनोंकी गणना एकहीमें की जाती है।

लिङ्गके दो स्वरूप होनेकी कथा पुराणोंमें इस प्रकार दी गयी है—एक बार विन्ध्यपर्वतने पार्थिव-अर्चनाके साथ भगवान् शिवकी छः मासतक कठिन उपासना की। उनकी इस उपासनासे प्रसन्न होकर भूतभावन शङ्करजी वहाँ प्रकट हुए। उन्होंने विन्ध्यको उनके मनोवाञ्छित वर प्रदान किये। विन्ध्याचलकी इस वर-प्राप्तिके अवसरपर वहाँ बहुत-से ऋषिगण और मुनि भी पधारे। उनकी प्रार्थनापर शिवजीने अपने ओङ्कारेश्वर नामक लिङ्गके दो भाग किये। एकका नाम ओङ्कारेश्वर और दूसरेका अमलेश्वर पड़ा। दोनों लिङ्गोंका स्थान और मन्दिर पृथक् होते भी दोनोंकी सत्ता और स्वरूप एक ही माना गया है।

शिवपुराणमें इस ज्योतिर्लिङ्गकी महिमाका विस्तारसे वर्णन किया गया है। श्रीओङ्कारेश्वर और श्रीअमलेश्वरके दर्शनका पुण्य बताते हुए नर्मदा-स्नानके पावन फलका भी वर्णन किया गया है। प्रत्येक मनुष्यको इस क्षेत्रकी यात्रा अवश्य ही करनी चाहिये। लौकिक-पारलौकिक दोनों प्रकारके उत्तम फलोंकी प्राप्ति भगवान् ओङ्कारेश्वरकी कृपासे सहज ही हो जाती है। अर्थ, धर्म, काम, मोक्षके सभी साधन उसके लिये सहज ही सुलभ हो जाते हैं। अन्ततः उसे लोकेश्वर महादेव भगवान् शिवके परमधामकी प्राप्ति भी हो जाती है।

भगवान् शिव तो भक्तोंपर अकारण ही कृपा करनेवाले हैं। वह अवढरदानी हैं। फिर जो लोग यहाँ आकर उनके दर्शन करते हैं, उनके सौभाग्यके विषयमें कहना ही क्या है? उनके लिये तो सभी प्रकारके उत्तम पुण्य-मार्ग सदा-सदाके लिये खुल जाते हैं।
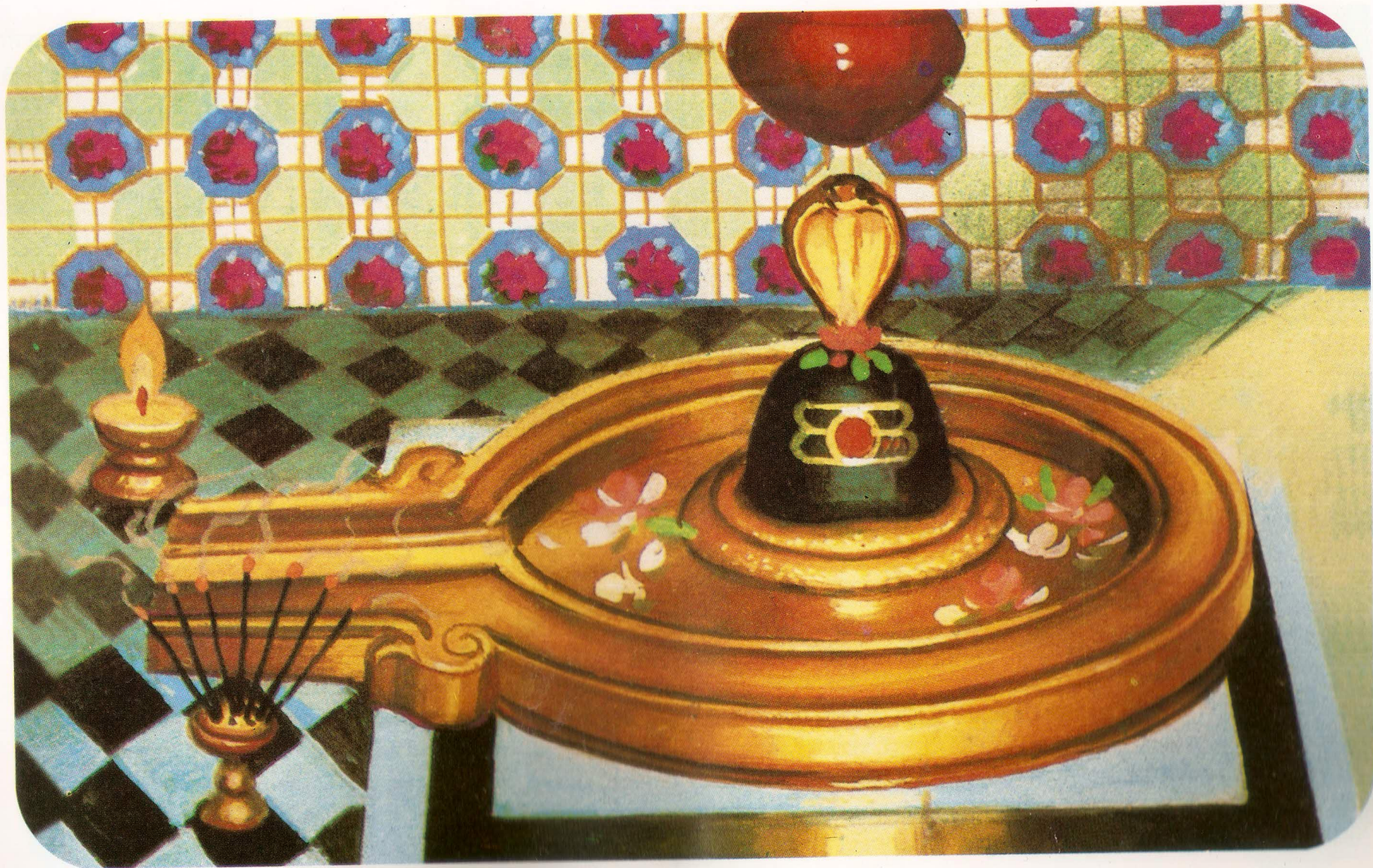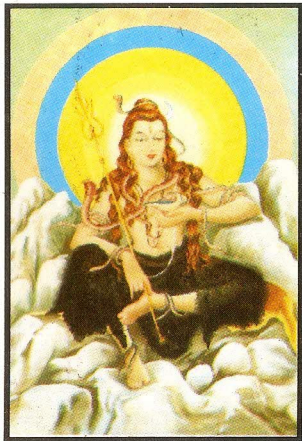
५. श्रीकेदारनाथ

पुराणों एवं शास्त्रोंमें श्रीकेदारेश्वर-ज्योतिर्लिङ्गकी महिमाका वर्णन बारम्बार किया गया है। यह ज्योतिर्लिङ्ग पर्वतराज हिमालयकी केदार नामक चोटीपर अवस्थित है। यहाँकी प्राकृतिक शोभा देखते ही बनती है। इस चोटीके पश्चिम भागमें पुण्यमती मन्दाकिनी नदीके तटपर स्थित केदारेश्वर महादेवका मन्दिर अपने स्वरूपसे ही हमें धर्म और अध्यात्मकी ओर बढ़नेका सन्देश देता है। चोटीके पूर्वमें अलकनन्दाके सुरम्य तटपर बदरीनाथका परम प्रसिद्ध मन्दिर है। अलकनन्दा और मन्दाकिनी—ये दोनों नदियाँ नीचे रुद्रप्रयागमें आकर मिल जाती हैं। दोनों नदियोंकी यह संयुक्त धारा और नीचे देवप्रयागमें आकर भागीरथी गङ्गासे मिल जाती हैं। इस प्रकार परम पावन गङ्गाजीमें स्नान करनेवालोंको भी श्रीकेदारेश्वर और बदरीनाथके चरणोंको धोनेवाले जलका स्पर्श सुलभ हो जाता है।

इस अतीव पवित्र पुण्यफलदायी ज्योतिर्लिङ्गकी स्थापनाके विषयमें पुराणोंमें यह कथा दी गयी है—अनन्त रत्नोंके जनक, अतिशय पवित्र, तपस्वियों, ऋषियों, सिद्धों, देवताओंकी निवास-भूमि पर्वतराज हिमालयके केदार नामक अत्यन्त शोभाशाली शृङ्गपर महातपस्वी श्रीनर और नारायणने बहुत वर्षोंतक भगवान् शिवको प्रसन्न करनेके लिये बड़ी कठिन तपस्या की। कई हजार वर्षोंतक वे निराहार रहकर एक पैरपर खड़े होकर शिवनामका जप करते रहे। इस तपस्यासे सारे लोकोंमें उनकी चर्चा होने लगी। देवता, ऋषि-मुनि, यक्ष, गन्धर्व सभी उनकी साधना और संयमकी प्रशंसा करने लगे। चराचरके पितामह ब्रह्माजी और सबका पालन-पोषण करनेवाले भगवान् विष्णु भी महातपस्वी नर-नारायणके तपकी भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे। अन्तमें अवढरदानी भूतभावन भगवान् शङ्करजी भी उनकी उस कठिन साधनासे प्रसन्न हो उठे। उन्होंने प्रत्यक्ष प्रकट होकर उन दोनों ऋषियोंको दर्शन दिया। नर और नारायणने भगवान् भोलेनाथके दर्शनसे भाव-विह्वल और आनन्द-विभोर होकर बहुत प्रकारकी पवित्र स्तुतियों और मन्त्रोंसे उनकी पूजा-अर्चना की। भगवान् शिवजीने अत्यन्त प्रसन्न होकर उनसे वर माँगनेको कहा। भगवान् शिवकी यह बात सुनकर उन दोनों ऋषियोंने उनसे कहा, 'देवाधिदेव महादेव! यदि आप हमपर प्रसन्न हैं तो भक्तोंके कल्याणहेतु आप सदा-सर्वदाके लिये अपने स्वरूपको यहाँ स्थापित करनेकी कृपा करें। आपके यहाँ निवास करनेसे यह स्थान सभी प्रकारसे अत्यन्त पवित्र हो उठेगा। यहाँ आकर आपका दर्शन-पूजन करनेवाले मनुष्योंको आपकी अविनाशिनी भक्ति प्राप्त हुआ करेगी। प्रभो! आप मनुष्योंके कल्याण और उनके उद्धारके लिये अपने स्वरूपको यहाँ स्थापित करनेकी हमारी प्रार्थना अवश्य ही स्वीकार करें।'

उनकी प्रार्थना सुनकर भगवान् शिवने ज्योतिर्लिङ्गके रूपमें वहाँ वास करना स्वीकार किया। केदार नामक हिमालय-शृङ्गपर अवस्थित होनेके कारण इस ज्योतिर्लिङ्गको श्रीकेदारेश्वर-ज्योतिर्लिङ्गके रूपमें जाना जाता है।

भगवान् शिवसे वर माँगते हुए नर और नारायणने इस ज्योतिर्लिङ्ग और इस पवित्र स्थानके विषयमें जो कुछ कहा है, वह अक्षरशः सत्य है। इस ज्योतिर्लिङ्गके दर्शन-पूजन तथा यहाँ स्नान करनेसे भक्तोंको लौकिक फलोंकी प्राप्ति होनेके साथ-साथ अचल शिवभक्ति तथा मोक्षकी प्राप्ति भी हो जाती है।

६. श्रीभीमेश्वर

यह ज्योतिर्लिङ्ग गोहाटीके पास ब्रह्मपुर पहाड़ीपर अवस्थित है।

इस ज्योतिर्लिङ्गकी स्थापनाके विषयमें शिवपुराणमें यह कथा दी गयी है—

प्राचीनकालमें भीम नामक एक महाप्रतापी राक्षस था। वह कामरूप प्रदेशमें अपनी माँके साथ रहता था। वह महाबली राक्षस, राक्षसराज रावणके छोटे भाई कुम्भकर्णका पुत्र था। लेकिन उसने अपने पिताको कभी देखा न था। उसके होश सँभालनेके पूर्व ही भगवान् रामके द्वारा कुम्भकर्णका वध कर दिया गया था। जब वह युवावस्थाको प्राप्त हुआ तब उसकी माताने उससे सारी बातें बतायीं। भगवान् विष्णुके अवतार श्रीरामचन्द्रजीद्वारा अपने पिताके वधकी बात सुनकर वह महाबली राक्षस अत्यन्त सन्तप्त और क्रुद्ध हो उठा। अब वह निरन्तर भगवान् श्रीहरिके वधका उपाय सोचने लगा। उसने अपने अभीष्टकी प्राप्तिके लिये एक हजार वर्षतक कठिन तपस्या की। उसकी तपस्यासे प्रसन्न होकर ब्रह्माजीने उसे लोकविजयी होनेका वर दे दिया। अब तो वह राक्षस ब्रह्माजीके उस वरके प्रभावसे सारे प्राणियोंको पीड़ित करने लगा। उसने देवलोकपर आक्रमण करके इन्द्र आदि सारे देवताओंको वहाँसे बाहर निकाल दिया। पूरे देवलोकपर अब भीमका अधिकार हो गया। इसके बाद उसने भगवान् श्रीहरिको भी युद्धमें परास्त किया। श्रीहरिको पराजित करनेके पश्चात् उसने कामरूपके परम शिवभक्त राजा सुदक्षिणपर आक्रमण करके उन्हें मन्त्रियों-अनुचरोंसहित बन्दी बना लिया। इस प्रकार धीरे-धीरे उसने सारे लोकोंपर अपना अधिकार जमा लिया। उसके अत्याचारसे वेदों, पुराणों, शास्त्रों और स्मृतियोंका सर्वत्र एकदम लोप हो गया। वह किसीको कोई धार्मिक कृत्य नहीं करने देता था। इस प्रकार यज्ञ, दान, तप, स्वाध्याय आदिके सारे काम एकदम रुक गये।

उसके अत्याचारकी भीषणतासे घबराकर ऋषि-मुनि और देवगण भगवान् शिवकी शरणमें गये और उनसे अपना तथा अन्य सारे प्राणियोंका दुःख कहा। उनकी यह प्रार्थना सुनकर भगवान् शिवने कहा, ''मैं शीघ्र ही उस अत्याचारी राक्षसका संहार करूँगा। उसने मेरे प्रिय भक्त, कामरूप-नरेश सुदक्षिणको भी सेवकोंसहित बन्दी बना लिया है। वह अत्याचारी असुर अब और अधिक जीवित रहनेका अधिकारी नहीं रह गया है।'' भगवान् शिवसे यह आश्वासन पाकर ऋषि-मुनि और देवगण अपने-अपने स्थानको वापस लौट गये।

इधर राक्षस भीमके बन्दीगृहमें पड़े हुए राजा सुदक्षिणने भगवान् शिवका ध्यान किया। वे अपने सामने पार्थिव शिवलिङ्ग रखकर अर्चना कर रहे थे। उन्हें ऐसा करते देख क्रोधोन्मत्त होकर राक्षस भीमने अपनी तलवारसे उस पार्थिव शिवलिङ्गपर प्रहार किया। किन्तु उसकी तलवारका स्पर्श उस लिङ्गसे हो भी नहीं पाया कि उसके भीतरसे साक्षात् भूतभावन शङ्करजी वहाँ प्रकट हो गये। उन्होंने अपनी हुंकारमात्रसे उस राक्षसको वहीं जलाकर भस्म कर दिया।

भगवान् शिवजीका यह अद्भुत कृत्य देखकर सारे ऋषि-मुनि और देवगण वहाँ एकत्र होकर उनकी स्तुति करने लगे। उन लोगोंने भगवान् शिवसे प्रार्थना की कि महादेव! आप लोक-कल्याणार्थ अब सदाके लिये यहीं निवास करें। यह क्षेत्र शास्त्रोंमें अपवित्र बताया गया है। आपके निवाससे यह परम पवित्र पुण्यक्षेत्र बन जायगा। भगवान् शिवने उन सबकी यह प्रार्थना स्वीकार कर ली। वहाँ वह ज्योतिर्लिङ्गके रूपमें सदाके लिये निवास करने लगे। उनका यह ज्योतिर्लिङ्ग भीमेश्वरके नामसे विख्यात हुआ।

शिवपुराण (अध्याय १९ से २१) में यह कथा पूरे विस्तारसे दी गयी है। इस ज्योतिर्लिङ्गकी महिमा अमोघ है। इसके दर्शनका फल कभी व्यर्थ नहीं जाता। भक्तोंकी सभी मनोकामनाएँ यहाँ आकर पूर्ण हो जाती हैं।
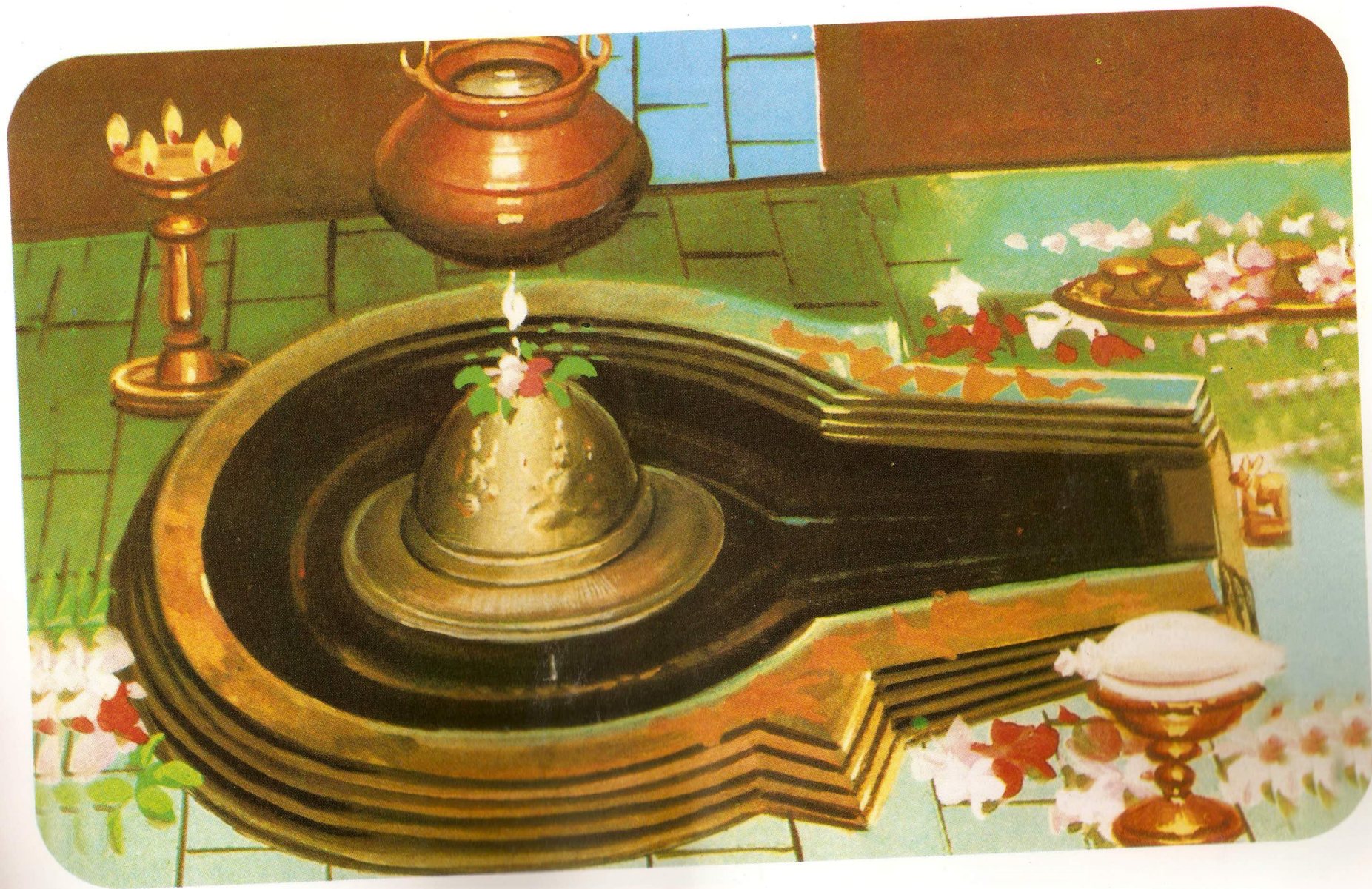
७. श्रीविश्वेश्वर

यह ज्योतिर्लिङ्ग उत्तर भारतकी प्रसिद्ध नगरी काशीमें स्थित है। इस नगरीका प्रलयकालमें भी लोप नहीं होता। उस समय भगवान् अपनी वासभूमि इस पवित्र नगरीको अपने त्रिशूलपर धारण कर लेते हैं और सृष्टिकाल आनेपर पुनः यथास्थान रख देते हैं। सृष्टिकी आदि स्थली भी इसी नगरीको बताया जाता है। भगवान् विष्णुने इसी स्थानपर सृष्टि-कामनासे तपस्या करके भगवान् शङ्करजीको प्रसन्न किया था। अगस्त्य मुनिने भी इसी स्थानपर अपनी तपस्याद्वारा भगवान् शिवको सन्तुष्ट किया था। इस पवित्र नगरीकी महिमा ऐसी है कि यहाँ जो भी प्राणी अपने प्राण त्याग करता है, उसे मोक्षकी प्राप्ति होती है। भगवान् शङ्कर उसके कानमें 'तारक' मन्त्रका उपेदश करते हैं। इस मन्त्रके प्रभावसे पापी-से-पापी प्राणी भी सहज ही भवसागरकी बाधाओंसे पार हो जाते हैं।

विषयासक्तचित्तोऽपि त्यक्तधर्मरतिर्नरः।
इह क्षेत्रे मृतः सोऽपि संसारे न पुनर्भवेत्॥

अर्थात् "विषयोंमें आसक्त, अधर्मनिरत व्यक्ति भी यदि इस काशीक्षेत्रमें मृत्युको प्राप्त हो तो उसे भी पुनः संसार-बन्धनमें नहीं आना पड़ता।" मत्स्यपुराणमें इस नगरीका महत्त्व बताते हुए कहा गया है—"जप, ध्यान और ज्ञानरहित तथा दुःखोंसे पीड़ित मनुष्योंके लिये काशी ही एकमात्र परमगति है। श्रीविश्वेश्वरके आनन्द-काननमें दशाश्वमेध, लोलार्क, बिन्दुमाधव, केशव और मणिकर्णिका—ये पाँच प्रधान तीर्थ हैं। इसीसे इसे 'अविमुक्त क्षेत्र' कहा जाता है।"

जपध्यानविहीनानां ज्ञानवर्जितचेतसाम्।
ततो दुःखाहतानां च गतिर्वाराणसी नृणाम्॥
तीर्थानां पञ्चकं सारं विश्वेशानन्दकानने।
दशाश्वमेधं लोलार्कः केशवो बिन्दुमाधवः॥
पञ्चमी तु महाश्रेष्ठा प्रोच्यते मणिकर्णिका।
एभिस्तु तीर्थवर्यैश्च वर्ण्यते ह्यविमुक्तकम्॥

इस परम पवित्र नगरीके उत्तरकी तरफ ॐकारखण्ड, दक्षिणमें केदारखण्ड और बीचमें विश्वेश्वरखण्ड है। प्रसिद्ध विश्वेश्वर-ज्योतिर्लिङ्ग इसी खण्डमें अवस्थित है। पुराणोंमें इस ज्योतिर्लिङ्गके सम्बन्धमें यह कथा दी गयी है—

भगवान् शङ्कर पार्वतीजीका पाणिग्रहण करके कैलास पर्वतपर रह रहे थे। लेकिन वहाँ पिताके घरमें ही विवाहित जीवन बिताना पार्वतीजीको अच्छा न लगता था। एक दिन उन्होंने भगवान् शिवसे कहा—"आप मुझे अपने घर ले चलिये। यहाँ रहना मुझे अच्छा नहीं लगता। सारी लड़कियाँ शादीके बाद अपने पतिके घर जाती हैं, मुझे पिताके घरमें ही रहना पड़ रहा है।" भगवान् शिवने उनकी यह बात स्वीकार कर ली। वह माता पार्वतीजीको साथ लेकर अपनी पवित्र नगरी काशीमें आ गये। यहाँ आकर वे विश्वेश्वर-ज्योतिर्लिङ्गके रूपमें स्थापित हो गये।

शास्त्रोंमें इस ज्योतिर्लिङ्गकी महिमाका निगदन पुष्कल रूपोंमें किया गया है। इस ज्योतिर्लिङ्गके दर्शन-पूजनद्वारा मनुष्य समस्त पापों-तापोंसे छुटकारा पा जाता है। प्रतिदिन नियमसे श्रीविश्वेश्वरके दर्शन करनेवाले भक्तोंके योगक्षेमका समस्त भार भूतभावन भगवान् शङ्कर अपने ऊपर ले लेते हैं। ऐसा भक्त उनके परमधामका अधिकारी बन जाता है। भगवान् शिवजीकी कृपा उसपर सदैव बनी रहती है। रोग, शोक, दुःख-दैन्य उसके पास भूलकर भी नहीं जाते।
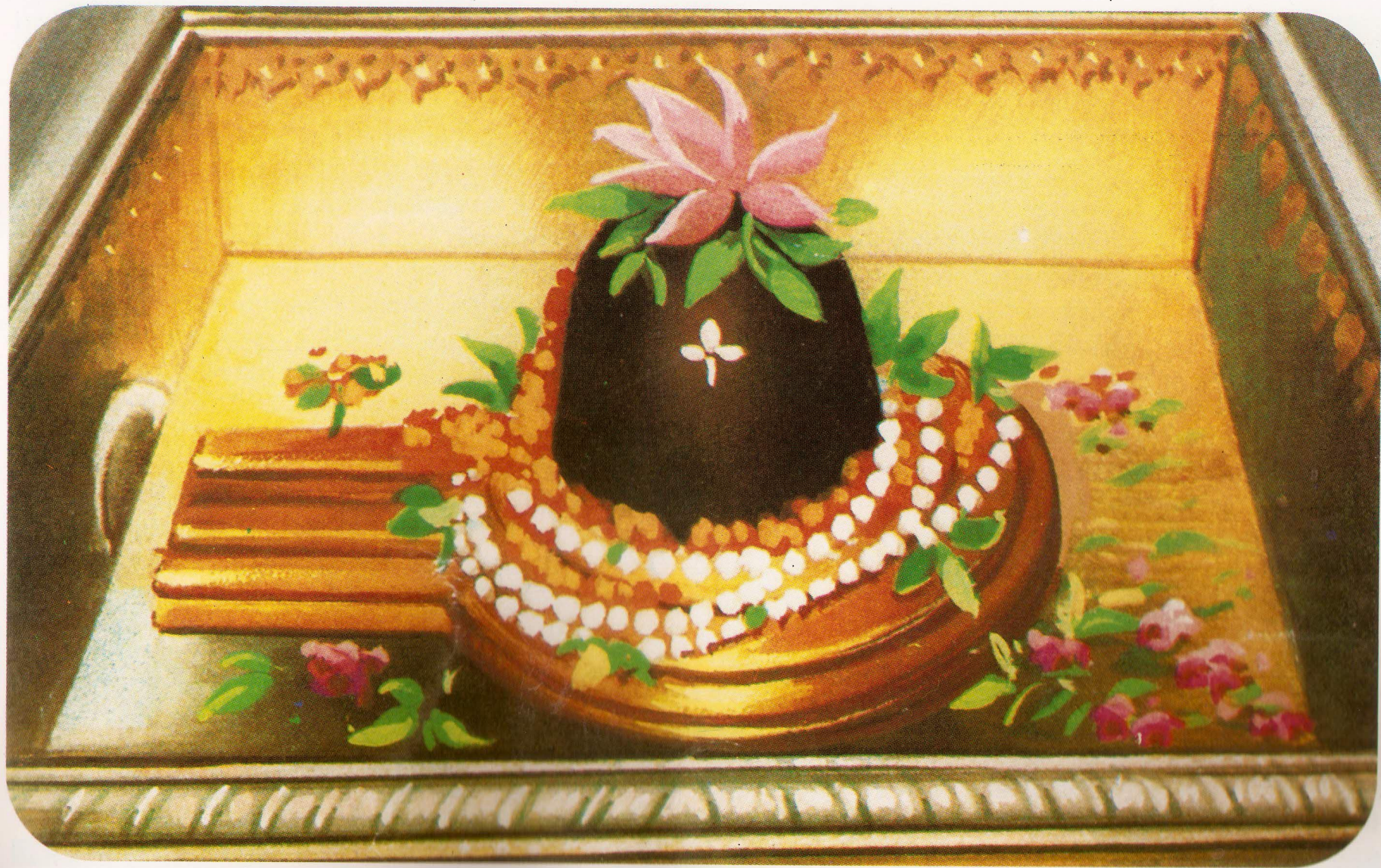
८. श्रीत्र्यम्बकेश्वर

यह ज्योतिर्लिङ्ग महाराष्ट्र प्रान्तमें नासिकसे ३० कि० मी० पश्चिममें अवस्थित है।

इस ज्योतिर्लिङ्गकी स्थापनाके विषयमें शिवपुराणमें यह कथा दी गयी है—

एक बार महर्षि गौतमके तपोवनमें रहनेवाले ब्राह्मणोंकी पत्नियाँ किसी बातपर उनकी पत्नी अहल्यासे नाराज हो गयीं। उन्होंने अपने पतियोंको ऋषि गौतमका अपकार करनेके लिये प्रेरित किया। उन ब्राह्मणोंने इसके निमित्त भगवान् श्रीगणेशजीकी आराधना की। उनकी आराधनासे प्रसन्न हो गणेशजीने प्रकट होकर उनसे वर माँगनेको कहा। उन ब्राह्मणोंने कहा—''प्रभो! यदि आप हमपर प्रसन्न हैं तो किसी प्रकार ऋषि गौतमको इस आश्रमसे बाहर निकाल दें।'' उनकी यह बात सुनकर गणेशजीने उन्हें ऐसा वर न माँगनेके लिये समझाया। किन्तु वे अपने आग्रहपर अटल रहे। अन्ततः गणेशजीको विवश होकर उनकी बात माननी पड़ी। अपने भक्तोंका मन रखनेके लिये वे एक दुर्बल गायका रूप धारण करके ऋषि गौतमके खेतमें जाकर चरने लगे। गायको फसल चरते देखकर ऋषि बड़ी नरमीके साथ हाथमें तृण लेकर उसे हाँकनेके लिये लपके। उन तृणोंका स्पर्श होते ही वह गाय वहीं मरकर गिर पड़ी। अब तो बड़ा हाहाकार मचा। सारे ब्राह्मण एकत्र हो गोहत्यारा कहकर ऋषि गौतमकी भूरि-भूरि भर्त्सना करने लगे। ऋषि गौतम इस घटनासे बहुत आश्चर्यचकित और दुःखी थे। अब उन सारे ब्राह्मणोंने उनसे कहा कि तुम्हें यह आश्रम छोड़कर अन्यत्र कहीं दूर चले जाना चाहिये। गोहत्यारेके निकट रहनेसे हमें भी पाप लगेगा। विवश होकर ऋषि गौतम अपनी पत्नी अहल्याके साथ वहाँसे एक कोस दूर जाकर रहने लगे। किन्तु उन ब्राह्मणोंने वहाँ भी उनका रहना दूभर कर दिया। वे कहने लगे—''गोहत्याके कारण तुम्हें अब वेद-पाठ और यज्ञादिके कार्य करनेका कोई अधिकार नहीं रह गया है।'' अत्यन्त कातर भावसे ऋषि गौतमने उन ब्राह्मणोंसे प्रार्थना की कि आपलोग मेरे प्रायश्चित्त और उद्धारका कोई उपाय बतावें। तब उन्होंने कहा—''गौतम! तुम अपने पापको सर्वत्र सबको बताते हुए तीन बार पूरी पृथिवीकी परिक्रमा करो। फिर लौटकर यहाँ एक महीनेतक व्रत करो। इसके बाद 'ब्रह्मगिरि' की १०१ परिक्रमा करनेके बाद तुम्हारी शुद्धि होगी अथवा यहाँ गङ्गाजीको लाकर उनके जलसे स्नान करके एक करोड़ पार्थिव शिवलिङ्गोंसे शिवजीकी आराधना करो। इसके बाद पुनः गङ्गाजीमें स्नान करके इस ब्रह्मगिरिकी ११ बार परिक्रमा करो। फिर सौ घड़ोंके पवित्र जलसे पार्थिव शिवलिङ्गको स्नान करानेसे तुम्हारा उद्धार होगा।''

ब्राह्मणोंके कथनानुसार महर्षि गौतम वे सारे कृत्य पूरे करके पत्नीके साथ पूर्णतः तल्लीन होकर भगवान् शिवकी आराधना करने लगे। इससे प्रसन्न हो भगवान् शिवने प्रकट होकर उनसे वर माँगनेको कहा। महर्षि गौतमने उनसे कहा—''भगवन्! मैं यही चाहता हूँ कि आप मुझे गोहत्याके पापसे मुक्त कर दें।'' भगवान् शिवने कहा— ''गौतम! तुम सदैव, सर्वथा निष्पाप हो। गोहत्या तुम्हें छलपूर्वक लगायी गयी थी। छलपूर्वक ऐसा करवानेवाले तुम्हारे आश्रमके ब्राह्मणोंको मैं दण्ड देना चाहता हूँ।'' गौतमने कहा—''प्रभो! उन्हींके निमित्तसे तो मुझे आपका दर्शन प्राप्त हुआ है। अब उन्हें मेरा परमहित समझकर उनपर आप क्रोध न करें।'' बहुत-से ऋषियों, मुनियों और देवगणोंने वहाँ एकत्र हो गौतमकी बातका अनुमोदन करते हुए भगवान् शिवसे सदा वहाँ निवास करनेकी प्रार्थना की। वे उनकी बात मानकर वहाँ त्र्यम्बक-ज्योतिर्लिङ्गके नामसे स्थित हो गये। गौतमजीद्वारा लायी गयी गङ्गाजी भी वहीं पासमें गोदावरी नामसे प्रवाहित होने लगीं। यह ज्योतिर्लिङ्ग समस्त पुण्योंको प्रदान करनेवाला है।
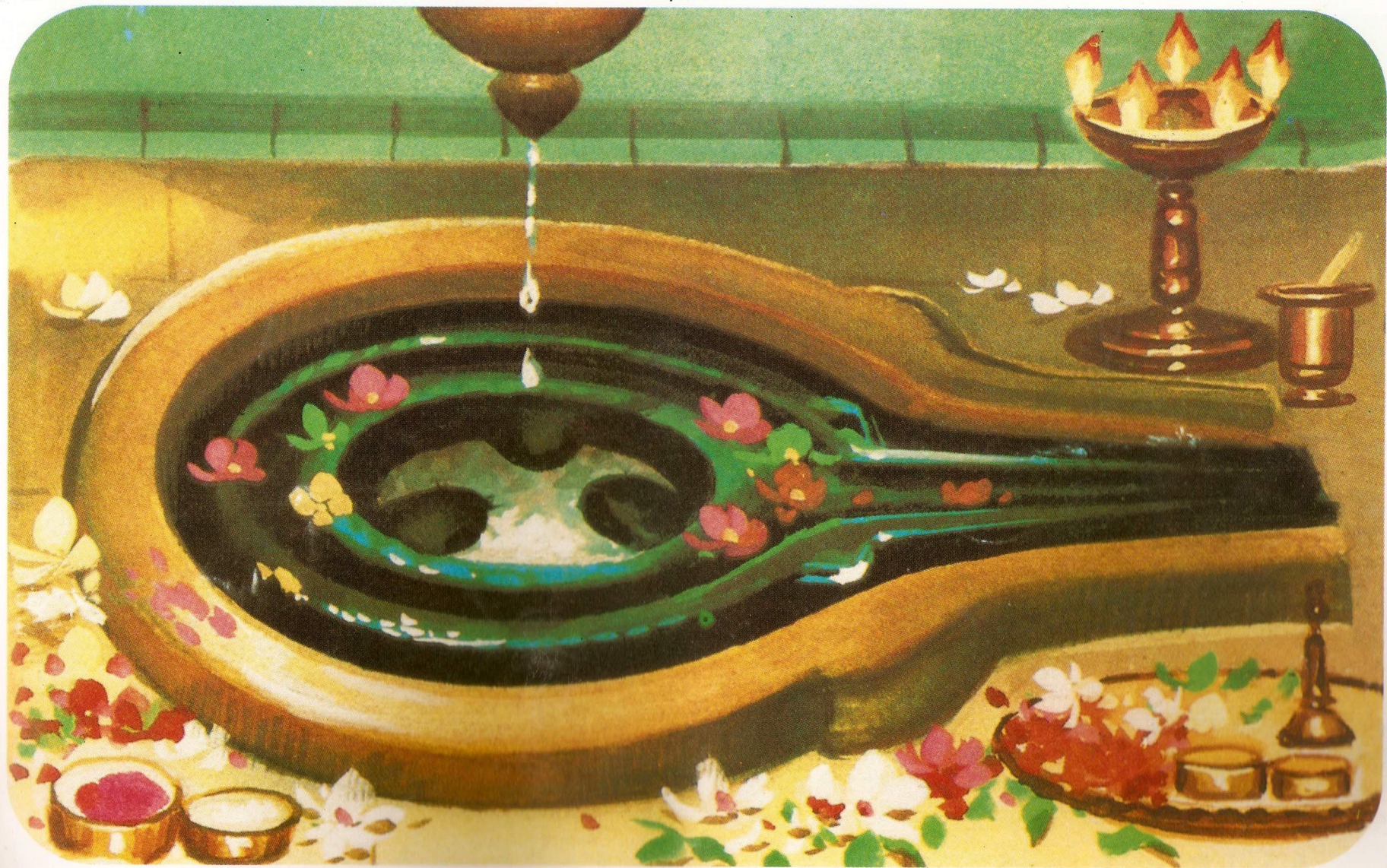
९. श्रीवैद्यनाथ

यह ज्योतिर्लिङ्ग बिहार प्रान्तके सन्थाल परगनेमें स्थित है । शास्त्र और लोक दोनोंमें इसकी बड़ी प्रसिद्धि है। इसकी महिमाका वर्णन भूरिशः किया गया है।

इसकी स्थापनाके विषयमें यह कथा कही जाती है—एक बार राक्षसराज रावणने हिमालय-पर जाकर भगवान् शिवका दर्शन प्राप्त करनेके लिये बड़ी घोर तपस्या की। उसने एक-एक करके अपने सिर काटकर शिवलिङ्गपर चढ़ाने शुरू किये। इस प्रकार उसने अपने नौ सिर वहाँ काटकर चढ़ा डाले। जब वह अपना दसवाँ और अन्तिम सिर काटकर चढ़ानेके लिये उद्यत हुआ तब भगवान् शिव अति प्रसन्न और सन्तुष्ट होकर उसके समक्ष प्रकट हो गये। शीश काटनेको उद्यत रावणका हाथ पकड़कर उन्होंने उसे वैसा करनेसे रोक दिया। उसके नवों सिर भी पहलेकी तरह जोड़ दिये और अत्यन्त प्रसन्न होकर उससे वर माँगनेको कहा।

रावणने वरके रूपमें भगवान् शिवसे उस लिङ्गको अपनी राजधानी लङ्कामें ले जानेकी आज्ञा माँगी। भगवान् शिवने उसे यह वरदान तो दे दिया लेकिन एक शर्त भी उसके साथ लगा दिया। उन्होंने कहा, 'तुम इसे ले जा सकते हो किन्तु यदि रास्तेमें इसे कहीं रख दोगे तो यह वहीं अचल हो जायगा, तुम फिर इसे उठा न सकोगे। रावण इस बातको स्वीकार कर उस शिवलिङ्गको उठाकर लङ्काके लिये चल पड़ा। चलते-चलते एक जगह मार्गमें उसे लघुशङ्का करनेकी आवश्यकता महसूस हुई। वह उस शिवलिङ्गको एक अहीरके हाथमें थमाकर लघुशङ्काकी निवृत्तिके लिये चल पड़ा। उस अहीरको शिवलिङ्गका भार बहुत अधिक मालूम दिया, वह उसे सँभाल न सका। विवश होकर उसने उसे वहीं भूमिपर रख दिया। रावण जब लौटकर आया तब फिर बहुत प्रयत्न करनेके बाद भी उस शिवलिङ्गको किसी प्रकार भी उठा न सका। अन्तमें निरुपाय होकर उस पवित्र शिवलिङ्गपर अपने अँगूठेका निशान बनाकर उसे वहीं छोड़कर लङ्काको लौट गया। तत्पश्चात् ब्रह्मा, विष्णु आदि देवताओंने वहाँ आकर उस शिवलिङ्गका पूजन किया। इस प्रकार वहाँ उसकी प्रतिष्ठा कर वे लोग अपने-अपने धामको लौट गये। यही ज्योतिर्लिङ्ग श्रीवैद्यनाथके नामसे जाना जाता है।

यह वैद्यनाथ-ज्योतिर्लिङ्ग अनन्त फलोंको देनेवाला है। यह ग्यारह अङ्गुल ऊँचा है। इसके ऊपर अँगूठेके आकारका गढ़ा है। कहा जाता है कि यह वही निशान है जिसे रावणने अपने अँगूठेसे बनाया था। यहाँ दूर-दूरसे तीर्थोंका जल लाकर चढ़ानेका विधान है। रोग-मुक्तिके लिये भी इस ज्योतिर्लिङ्गकी महिमा बहुत प्रसिद्ध है। पुराणोंमें बताया गया है कि जो मनुष्य इस ज्योतिर्लिङ्गका दर्शन करता है, उसे अपने समस्त पापोंसे छुटकारा मिल जाता है। उसपर भगवान् शिवकी कृपा सदा बनी रहती है। दैहिक, दैविक, भौतिक कष्ट उसके पास भूलकर भी नहीं आते। भगवान् भूतभावनकी कृपासे वह सारी बाधाओं, समस्त रोगों-शोकोंसे छुटकारा पा जाता है। उसे परम शान्तिदायक शिवधामकी प्राप्ति होती है। शिवका कृपा-प्राप्त जन सारे संसारके लिये सुखदायक होता है। उसके सारे कृत्य भगवान् शिवको समर्पित करके किये जाते हैं। सारे संसारमें उसे भगवान् शिवके ही दर्शन होते हैं। सारे प्राणियोंके प्रति उसमें ममता और दयाका भाव होता है। सभी भेदोंमें उसकी अभेद दृष्टि हो जाती है। किसी भी प्राणीके प्रति उसमें ईर्ष्या, द्वेष, वैर, घृणा, क्रोधका अभाव हो जाता है। ऐसा भक्त सदैव सभीके कल्याण और हितमें लगा रहता है। भगवान् शिवकी भक्तिका यह अमोघ फल हमें अवश्य ही प्राप्त करना चाहिये।
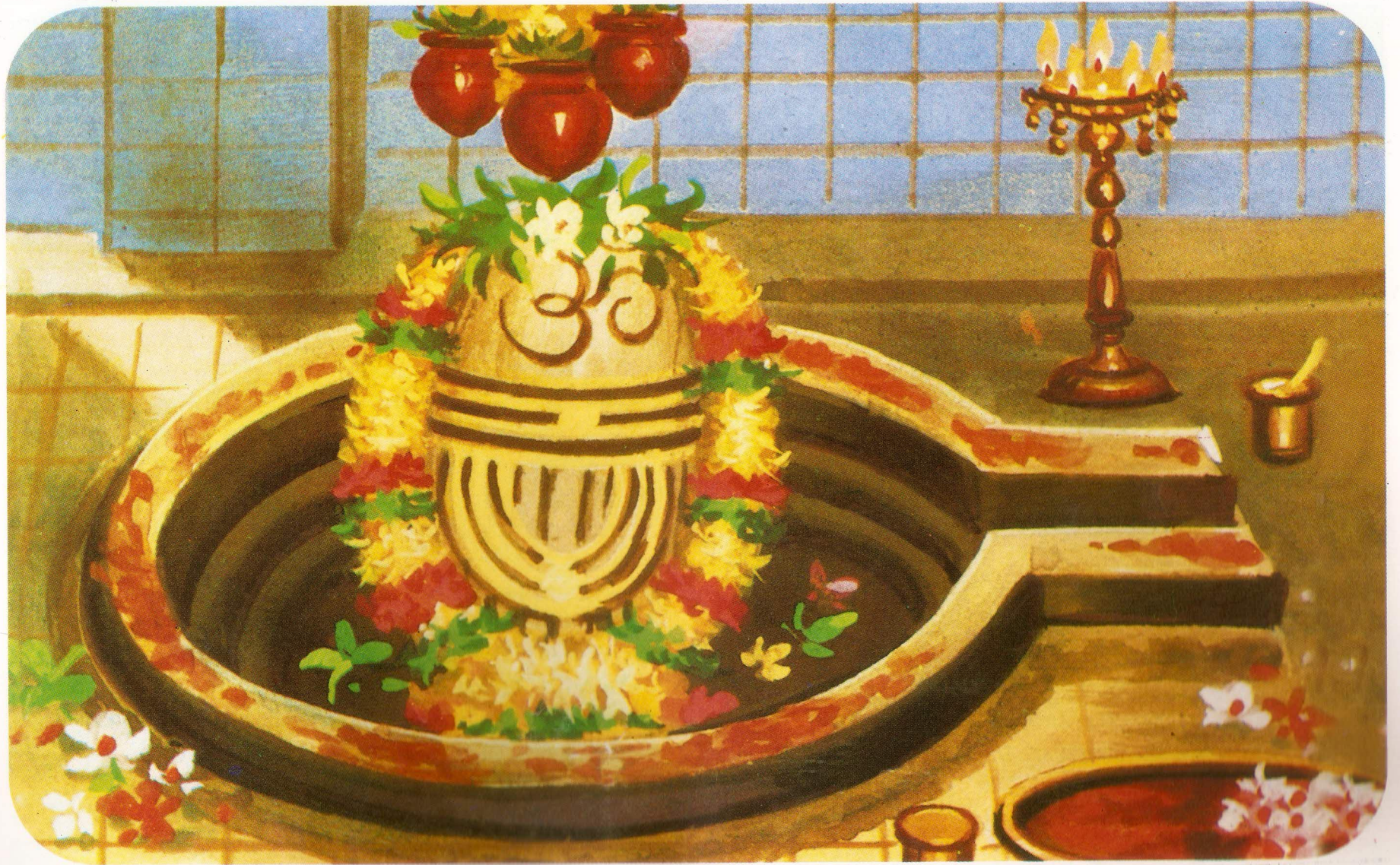
१०. श्रीनागेश्वर

भगवान् शिवका यह प्रसिद्ध ज्योतिर्लिङ्ग गुजरात प्रान्तमें द्वारकापुरीसे लगभग १७ मीलकी दूरीपर स्थित है।

इस ज्योतिर्लिङ्गके सम्बन्धमें पुराणोंमें यह कथा दी हुई है—सुप्रिय नामक एक बड़ा धर्मात्मा और सदाचारी वैश्य था। वह भगवान् शिवका अनन्य भक्त था। वह निरन्तर उनके आराधन, पूजन और ध्यानमें तल्लीन रहता था। अपने सारे कार्य वह भगवान् शिवको अर्पित करके करता था। मन, वचन, कर्मसे वह पूर्णतः शिवार्चनमें ही तल्लीन रहता था। उसकी इस शिवभक्तिसे दारुक नामक एक राक्षस बहुत क्रुद्ध रहता था। उसे भगवान् शिवकी यह पूजा किसी प्रकार भी अच्छी नहीं लगती थी। वह निरन्तर इस बातका प्रयत्न किया करता था कि उस सुप्रियकी पूजा-अर्चनामें विघ्न पहुँचे। एक बार सुप्रिय नौकापर सवार होकर कहीं जा रहा था। उस दुष्ट राक्षस दारुकने यह उपयुक्त अवसर देखकर उस नौकापर आक्रमण कर दिया। उसने नौकामें सवार सभी यात्रियोंको पकड़कर अपनी राजधानीमें ले जाकर कैद कर दिया। सुप्रिय कारागारमें भी अपने नित्यनियमके अनुसार भगवान् शिवकी पूजा-आराधना करने लगा। अन्य बन्दी यात्रियोंको भी वह शिवभक्तिकी प्रेरणा देने लगा। दारुकने जब अपने सेवकोंसे सुप्रियके विषयमें यह समाचार सुना तब वह अत्यन्त क्रुद्ध होकर उस कारागरमें आ पहुँचा। सुप्रिय उस समय भगवान् शिवके चरणोंमें ध्यान लगाये हुए दोनों आँखें बन्द किये बैठा था। उस राक्षसने उसकी यह मुद्रा देखकर अत्यन्त भीषण स्वरमें उसे डाँटते हुए कहा—'अरे दुष्ट वैश्य! तू आँखें बन्दकर इस समय यहाँ कौन-से उपद्रव और षड्यन्त्र करनेकी बातें सोच रहा है?' उसके यह कहनेपर भी धर्मात्मा शिवभक्त सुप्रिय वैश्यकी समाधि भङ्ग नहीं हुई। अब तो वह दारुण नामक महाभयानक राक्षस क्रोधसे एकदम बावला हो उठा। उसने तत्काल अपने अनुचर राक्षसोंको सुप्रिय वैश्य तथा अन्य सभी बन्दियोंको मार डालनेका आदेश दे दिया। सुप्रिय उसके इस आदेशसे जरा भी विचलित और भयभीत नहीं हुआ। वह एकनिष्ठ भाव और एकाग्र मनसे अपनी और अन्य बन्दियोंकी मुक्तिके लिये भगवान् शिवको पुकारने लगा। उसे यह पूर्ण विश्वास था कि मेरे आराध्य भगवान् शिवजी इस विपत्तिसे मुझे अवश्य ही छुटकारा दिलायेंगे। उसकी प्रार्थना सुनकर भगवान् शङ्करजी तत्क्षण उस कारागारमें एक ऊँचे स्थानमें एक चमकते हुए सिंहासनपर स्थित होकर ज्योतिर्लिङ्गके रूपमें प्रकट हो गये। उन्होंने इस प्रकार सुप्रियको दर्शन देकर उसे अपना पाशुपत-अस्त्र भी प्रदान किया। उस अस्त्रसे राक्षस दारुक तथा उसके सहायकोंका वध करके सुप्रिय शिवधामको चला गया। भगवान् शिवके आदेशानुसार ही इस ज्योतिर्लिङ्गका नाम नागेश्वर पड़ा।

इस पवित्र ज्योतिर्लिङ्गके दर्शनकी शास्त्रोंमें बड़ी महिमा बतायी गयी है। कहा गया है कि जो श्रद्धापूर्वक इसकी उत्पत्ति और माहात्म्यकी कथा सुनेगा वह सारे पापोंसे छुटकारा पाकर समस्त सुखोंका भोग करता हुआ अन्तमें भगवान् शिवके परम पवित्र दिव्य धामको प्राप्त होगा।

एतद् यः शृणुयान्नित्यं नागेशोद्भवमादरात्।
सर्वान् कामानियाद् धीमान् महापातकनाशनम्॥

(शि० पु० श० को० स० सं० अ० ४)
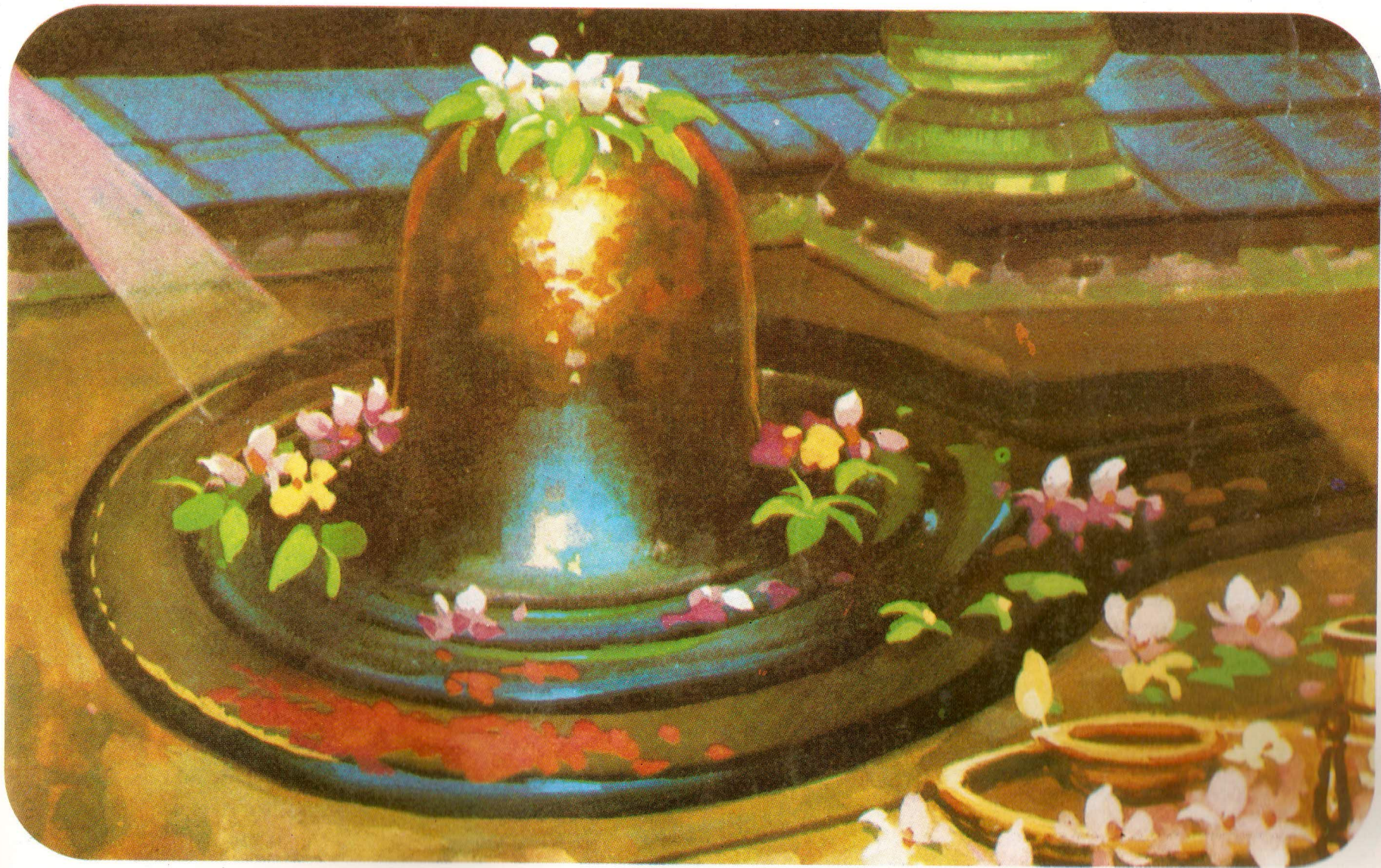
११. श्रीसेतुबन्ध रामेश्वर

इस ज्योतिर्लिङ्गकी स्थापना मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीरामचन्द्रजीने की थी। इसके विषयमें यह कथा कही जाती है—जब भगवान् श्रीरामचन्द्रजी लङ्कापर चढ़ाई करनेके लिये जा रहे थे तब इसी स्थानपर उन्होंने समुद्रतटकी बालुकासे शिवलिङ्ग बनाकर उसका पूजन किया था। ऐसा भी कहा जाता है कि इस स्थानपर ठहरकर भगवान् राम जल पी रहे थे कि आकाशवाणी हुई कि 'मेरी पूजा किये बिना ही जल पीते हो?' इस वाणीको सुनकर भगवान् श्रीरामने बालुकासे शिवलिङ्ग बनाकर उसकी पूजा की तथा भगवान् शिवसे रावणपर विजय प्राप्त करनेका वर माँगा। उन्होंने प्रसन्नताके साथ यह वर भगवान् श्रीरामको दे दिया। भगवान् शिवने लोक-कल्याणार्थ ज्योतिर्लिङ्गके रूपमें वहाँ निवास करनेकी सबकी प्रार्थना भी स्वीकार कर ली। तभीसे यह ज्योतिर्लिङ्ग यहाँ विराजमान है।

इस ज्योतिर्लिङ्गके विषयमें एक-दूसरी कथा इस प्रकार कही जाती है—जब भगवान् श्रीराम रावणका वध करके लौट रहे थे तब उन्होंने अपना पहला पड़ाव समुद्रके इस पार गन्धमादन पर्वतपर डाला था। वहाँ बहुत-से ऋषि और मुनिगण उनके दर्शनके लिये उनके पास आये। उन सभीका आदर-सत्कार करते हुए भगवान् रामने उनसे कहा कि पुलस्त्यके वंशज रावणका वध करनेके कारण मुझपर ब्रह्महत्याका पाप लग गया है, आपलोग मुझे इससे निवृत्तिका कोई उपाय बताइये। यह बात सुनकर वहाँ उपस्थित सारे ऋषियों-मुनियोंने एक स्वरसे कहा कि आप यहाँ शिवलिङ्गकी स्थापना कीजिये। इससे आप ब्रह्महत्याके पापसे छुटकारा पा जायँगे।

भगवान् श्रीरामने उनकी यह बात स्वीकार कर हनुमान्जीको कैलास पर्वत जाकर वहाँसे शिवलिङ्ग लानेका आदेश दिया। हनुमान्जी तत्काल ही वहाँ जा पहुँचे किन्तु उन्हें उस समय वहाँ भगवान् शिवके दर्शन नहीं हुए। अतः वे उनका दर्शन प्राप्त करनेके लिये वहीं बैठकर तपस्या करने लगे। कुछ काल पश्चात् शिवजीके दर्शन प्राप्तकर हनुमान्जी शिवलिङ्ग लेकर लौटे किन्तु तबतक शुभ मुहूर्त्त बीत जानेकी आशंकासे यहाँ सीताजीद्वारा लिङ्ग-स्थापन कराया जा चुका था।

हनुमान्जीको यह सब देखकर बहुत दुःख हुआ। उन्होंने अपनी व्यथा भगवान् श्रीरामसे कह सुनायी। भगवान्ने पहले ही लिङ्ग स्थापित किये जानेका कारण हनुमान्जीको बताते हुए कहा कि यदि तुम चाहो तो इस लिङ्गको यहाँसे उखाड़कर हटा दो। हनुमान्जी अत्यन्त प्रसन्न होकर उस लिङ्गको उखाड़ने लगे, किन्तु बहुत प्रयत्न करनेपर भी वह टस-से-मस नहीं हुआ। अन्तमें उन्होंने उस शिवलिङ्गको अपनी पूँछमें लपेटकर उखाड़नेका प्रयत्न किया, फिर भी वह ज्यों-का-त्यों अडिग बना रहा। उलटे हनुमान्जी ही धक्का खाकर एक कोस दूर मूर्च्छित होकर जा गिरे। उनके शरीरसे रक्त बहने लगा। यह देखकर सभी लोग अत्यन्त व्याकुल हो उठे। माता सीताजी पुत्रसे भी प्यारे अपने हनुमान्के शरीरपर हाथ फेरती हुई विलाप करने लगीं। मूर्च्छा दूर होनेपर हनुमान्जीने भगवान् श्रीरामको परम ब्रह्मके रूपमें सामने देखा। भगवान्ने उन्हें शङ्करजीकी महिमा बताकर उनका प्रबोध किया। हनुमान्जीद्वारा लाये गये लिङ्गकी स्थापना भी वहीं पासमें करवा दी। स्कन्दपुराणमें इसकी महिमा विस्तारसे वर्णित है।

१२. श्रीघुश्मेश्वर

द्वादश ज्योतिर्लिङ्गोंमें यह अन्तिम ज्योतिर्लिङ्ग है। इसे घुश्मेश्वर, घुसृणेश्वर या घृष्णेश्वर भी कहा जाता है। यह महाराष्ट्र प्रदेशमें दौलताबादसे बारह मील दूर वेरुलगाँवके पास अवस्थित है।

इस ज्योतिर्लिङ्गके विषयमें पुराणोंमें यह कथा दी गयी है—दक्षिण देशमें देवगिरिपर्वतके निकट सुधर्मा नामक एक अत्यन्त तेजस्वी तपोनिष्ठ ब्राह्मण रहता था। उसकी पत्नीका नाम सुदेहा था। दोनोंमें परस्पर बहुत प्रेम था। किसी प्रकारका कोई कष्ट उन्हें नहीं था। लेकिन उन्हें कोई सन्तान नहीं थी। ज्योतिष-गणनासे पता चला कि सुदेहाके गर्भसे सन्तानोत्पत्ति हो ही नहीं सकती। सुदेहा सन्तानकी बहुत ही इच्छुक थी। उसने आग्रह करके सुधर्माका दूसरा विवाह अपनी छोटी बहनसे करवा दिया।

पहले तो ब्राह्मणदेवताको यह बात नहीं जँची। लेकिन अन्तमें उन्हें पत्नीकी जिदके आगे झुकना ही पड़ा। वे उसका आग्रह टाल नहीं पाये। वे अपनी पत्नीकी छोटी बहन घुश्माको ब्याहकर घर ले आये। घुश्मा अत्यन्त विनीत और सदाचारिणी स्त्री थी। वह भगवान् शिवकी अनन्य भक्ता थी। प्रतिदिन एक सौ एक पार्थिव शिवलिङ्ग बनाकर हृदयकी सच्ची निष्ठाके साथ उनका पूजन करती थी। भगवान् शिवजीकी कृपासे थोड़े ही दिन बाद उसके गर्भसे अत्यन्त सुन्दर और स्वस्थ बालकने जन्म लिया। बच्चेके जन्मसे सुदेहा और घुश्मा दोनोंके ही आनन्दका पार न रहा। दोनोंके दिन बड़े आरामसे बीत रहे थे। लेकिन न जाने कैसे थोड़े ही दिनों बाद सुदेहाके मनमें एक कुविचारने जन्म ले लिया। वह सोचने लगी, मेरा तो इस घरमें कुछ है नहीं। सब कुछ घुश्माका है। मेरे पतिपर भी उसने अधिकार जमा लिया। सन्तान भी उसीकी है। यह कुविचार धीरे-धीरे उसके मनमें बढ़ने लगा। इधर घुश्माका वह बालक भी बड़ा हो रहा था। धीरे-धीरे वह जवान हो गया। उसका विवाह भी हो गया। अबतक सुधर्माके मनका कुविचाररूपी अङ्कुर एक विशाल वृक्षका रूप ले चुका था। अन्ततः एक दिन उसने घुश्माके युवा पुत्रको रातमें सोते समय मार डाला। उसके शवको ले जाकर उसने उसी तालाबमें फेंक दिया जिसमें घुश्मा प्रतिदिन पार्थिव शिवलिङ्गोंको फेंका करती थी। सुबह होते ही सबको इस बातका पता लगा। पूरे घरमें कुहराम मच गया। सुधर्मा और उसकी पुत्रवधू दोनों सिर पीटकर फूट-फूटकर रोने लगे। लेकिन घुश्मा नित्यकी भाँति भगवान् शिवकी आराधनामें तल्लीन रही। जैसे कुछ हुआ ही न हो। पूजा समाप्त करनेके बाद वह पार्थिव शिवलिङ्गोंको तालाबमें छोड़नेके लिये चल पड़ी। जब वह तालाबसे लौटने लगी उसी समय उसका प्यारा लाल तालाबके भीतरसे निकलकर आता हुआ दिखलायी पड़ा। वह सदाकी भाँति आकर घुश्माके चरणोंपर गिर पड़ा। जैसे कहीं आस-पाससे ही घूमकर आ रहा हो। इसी समय भगवान् शिव भी वहाँ प्रकट होकर घुश्मासे वर माँगनेको कहने लगे। वह सुदेहाकी घिनौनी करतूतसे अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे थे। अपने त्रिशूलद्वारा उसका गला काटनेको उद्यत दिखलायी दे रहे थे। घुश्माने हाथ जोड़कर भगवान् शिवसे कहा—'प्रभो! यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं तो मेरी उस अभागिन बहनको क्षमा कर दें। निश्चित ही उसने अत्यन्त जघन्य पाप किया है किन्तु आपकी दयासे मुझे मेरा पुत्र वापस मिल गया। अब आप उसे क्षमा करें और प्रभो! मेरी एक प्रार्थना और है, लोक-कल्याणके लिये आप इस स्थानपर सदा-सर्वदाके लिये निवास करें।' भगवान् शिवने उसकी ये दोनों बातें स्वीकार कर लीं। ज्योतिर्लिङ्गके रूपमें प्रकट होकर वह वहीं निवास करने लगे। सती शिवभक्ता घुश्माके आराध्य होनेके कारण वे यहाँ घुश्मेश्वर महादेवके नामसे विख्यात हुए।

घुश्मेश्वर-ज्योतिर्लिङ्गकी महिमा पुराणोंमें बहुत विस्तारसे वर्णित की गयी है। इनका दर्शन लोक-परलोक दोनोंके लिये अमोघ फलदायी है।